इकाई 29 एम.एन. रॉय : मार्क्सवाद और क्रांतिकारी मानवतावाद

इकाई की रूपरेखा

29.0 उद्देश्य
29.1 प्रस्तावना
29.2 कॉमिंटर्न (कम्युनिस्ट इंटरनेशनल) और उपनिवेशवाद का मुद्दा
29.3 रॉय और भारतीय राजनीति
  29.3.1 "संक्रमणकालीन भारत" में संक्रमण के बारे में
  29.3.2 संगठन के बारे में
  29.3.3 रॉय और द्वितीय विश्व युद्ध
  29.3.4 विचार प्रणाली की समस्याएं
29.4 क्रांतिकारी मानवतावाद
  29.4.1 मार्क्सवाद की समीक्षा
  29.4.2 राजनीति का मानवतावादी प्रारूप
  29.4.3 दलविहीन जनतंत्र
29.5 मूल्यांकन
29.6 सारांश
29.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें
29.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

29.0 उद्देश्य

राष्ट्रीय आंदोलन में भारतीय कम्युनिस्टों की भूमिका के बारे में आप पढ़ चुके हैं। भारतीय राजनीति में मार्क्सवाद को प्रवेश दिलाने वाले नेताओं में एम.एन. रॉय का नाम अग्रणी है। बाद में वे क्रांतिकारी मानवतावादी बन गए। इस इकाई में मार्क्सवाद से क्रांतिकारी मानवतावाद तक की एम.एन. रॉय की वैचारिक यात्रा के बारे में चर्चा की गई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप भारत में कम्युनिस्ट आंदोलन के विकास में एम.एन. रॉय की भूमिका समझ सकेंगे और मार्क्सवाद व्याख्याओं का वस्तुपरक मूल्यांकन कर सकेंगे।

29.1 प्रस्तावना

इस शताब्दी के भारतीय राजनैतिक चिंतन की लगभग सभी घटनाएं उपनिवेशवाद के ऐतिहासिक अंतर्विरोधों से पैदा हुई है। एम.एन. रॉय भारत के पहले कम्युनिस्ट चिंतक थे, जिन्होंने औपनिवेशिक शासन से मुक्ति के आंदोलन का मार्क्सवाद पर आधारित विकल्प तैयार करने का प्रयास किया। उनका बचपन का नाम नरेंद्रनाथ भट्टाचार्य था। 1910 के दशक में बंगाल के क्रांतिकारी आंदोलन में सक्रिय होने पर एम.एन. रॉय का छद्म नाम धारण किया और आगे चलकर इसी नाम से वे जाने जाने लगे। उनका जन्म 1887 में बंगाल के एक गांव अबेलिया में हुआ था। जब वे बड़े हो रहे थे तो बंगाल और अन्य जगहों पर साम्राज्यवादी विरोधी आंदोलन भी बढ़ रहे थे। ये वे दिन थे जब संवैधानिक आंदोलन पर प्रश्न चिन्ह लगने लगे थे और ज्यादा से ज्यादा युवा कार्यकर्त्ता उग्र राष्ट्रवाद का पक्षधर होता जा रहा था। उग्र राष्ट्रवाद से प्रभावित नरेंद्रनाथ ने भूमिगत आंदोलन के लिए बम बनाने और बैंक लूटने में शिरकत की। 1910 में "हाबड़ा शिवपुर षड्यंत्र" मुकदमें में नरेंद्रनाथ एवं अन्य कार्यकर्त्ताओं को नौ महीने की सजा हुई।

जेल से छूटने के बाद क्रांतिकारी आंदोलन में एम.एन. रॉय की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई। संगठन में उनकी स्थिति इतनी सुदृढ़ हो गई कि उन्हें हथियारों का सौदा करने जर्मनी भेजा गया। वे पहले अमेरिका गए जहां उनकी मुलाकात अमेरिका के वामपंथियों समाजवादियों,

अराजकतावादियों और श्रमिकसंघवादियों से हुई। मेक्सिको में, सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य एम. बोरोदिन से मुलाकात के बाद वे सामाजिक क्रांति के जरिए भारतीय जनता की मुक्ति के लिए प्रतिबद्ध हो गए। अतीत का मूल्यांकन करने पर उन्हें अपने पहले के दृष्टिकोण की संकीर्णता का एहसास हुआ और वे कार्मिटर्न की दूसरी कांग्रेस में शिरकत करने के उद्देश्य से मास्को की यात्रा पर निकल पड़े। मास्को में एम.एन. रॉय ने राष्ट्रीय और औपनिवेशिक मुद्दों पर लेनिन की अवधारणा का आलोचनात्मक मूल्यांकन करते हुए वैकल्पिक दस्तावेज पेश किया, जिसे कांग्रेस में संशोधन के बाद लेनिन के दस्तावेज के पूरक दस्तावेज के रूप में स्वीकार किया गया। कार्मिटर्न के एक प्रतिनिधि मंडल को लेकर उन्होंने चीन की यात्रा की। इस बीच रॉय और कार्मिटर्न के मतभेद बढ़ते गए और रॉय को कार्मिटर्न और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी दोनों से निष्कासित कर दिया गया।

रॉय, 1930 के आस-पास भारत वापस आने पर गिरफ्तार कर लिए गए और छः साल जेल में रहे। कारावास से छूटने पर उनके कार्यक्रमों को प्रभावित करने के उद्देश्य से कांग्रेस में शामिल हो गए। इस प्रयास में असफलता के बाद, 21 दिसम्बर 1943 को उन्होंने रैडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी की स्थापना की। पार्टी के असफल होने पर उन्होंने नव मानवतावाद नाम से एक नया सांस्कृतिक राजनैतिक आंदोलन की शुरुआत की।

29.2 कार्मिटर्न (कम्युनिस्ट इंटरनेशनल) और उपनिवेशवाद का मुद्दा

राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्न, सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और कार्मिटर्न के लिए निरंतर सरोकार के विषय थे। कार्मिटर्न के नेताओं को इन प्रश्नों के संतोषप्रद समाधान नहीं मिल रहे थे। मुख्य मुद्दा उपनिवेशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के लिए रणनीति तय करना था जिसे वे कार्मिटर्न के निर्देशों पर अपने देशों में लागू कर सकें। अलग-अलग देशों के लिए वहां की वस्तुगत भौतिक परिस्थितियों एवं शक्ति संबंधों के अनुसार अलग-अलग रणनीति तय करनी थी। लेकिन प्रायः कार्मिटर्न और स्थानीय कम्युनिस्ट पार्टी के वस्तुगत परिस्थितियों के मूल्यांकनों में अंतर होता था।

भारत और चीन जैसे विभिन्न देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों ने मार्क्सवाद के ही मूल्यों के आधार पर अपने-अपने समाजों का मूल्यांकन किया। चूंकि उनके अपने समाजों में ही तथ्यों के अलग-अलग आयाम थे इसलिए उनके मूल्यांकन पर प्रश्न चिन्ह लगने लगे। मसलन, भारत में, पिछड़ी हुई पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के चलते, कम्युनिस्ट पार्टी के समक्ष जो प्रश्न थे उनके हल मार्क्सवाद के मानकों के परे थे। वहां पूंजीवाद उत्पादन पद्धति से संबद्ध वर्गों की संरचना और वर्ग-संघर्ष का स्वरूप, पाश्चात्य पूंजीवादी समाजों से बिल्कुल भिन्न था। औपनिवेशिक शासन और विदेशी पूंजी के वर्चस्व के कारण यहां की अर्थव्यवस्था एक विकृत अर्थव्यवस्था थी। किन्तु अपने समाज का मूल्यांकन करने के बजाय यहां के कम्युनिस्ट कार्मिटर्न के निर्देशों पर निर्भर रहते थे। कार्मिटर्न के पास इन समाजों की पर्याप्त जानकारी के अभाव के कारण परिणाम प्रायः प्रतिकूल ही हुए। धीरे-धीरे इन देशों के राजनैतिक आंदोलनों ने कार्मिटर्न की यूरोप-केंद्रित इतिहास की समझ को चुनौती देना शुरू किया।

मार्क्सवाद के अनुसार क्लासिकी (आदर्श) बुर्जुआ क्रांति में बुर्जुवा वर्ग सफलतापूर्वक क्रांति का नेतृत्व करता है और उसकी परिणति तक ले जाता है। बुर्जुआ क्रांति का एक और स्वरूप भी है– "दूसरा रास्ता" का स्वरूप। इसमें बुर्जुआ वर्ग क्रांतिकारी शक्तियों पर वर्चस्व स्थापित कर पाने में असमर्थ होता है और बुर्जुआ क्रांति के नेतृत्व का दायित्व सर्वहारा के कंधों पर होता है। भारत के कम्युनिस्टों की बहस बुर्जुआ वर्ग के वर्चस्व के इर्द-गिर्द ही घूमती रही।

कार्मिटर्न की दूसरी कांग्रेस में औपनिवेशिक समाजों के अपने मूल्यांकन के आधार पर उपनिवेशवाद के मुद्दे पर एक दस्तावेज पेश किया गया। इस दस्तावेज के अनुसार, भारत का औपनिवेशिक बुर्जुआ वर्ग क्रांति का नेतृत्व करने में समर्थ था। लेनिन का तर्क था कि औपनिवेशिक समाजों में पिछड़े हुए औपनिवेशिक पूंजीवाद का यह मतलब नहीं हुआ कि वहां का बुर्जुआ वर्ग भी जर्मनी जैसे पिछड़े यूरोपीय देशों के बुर्जुआ वर्ग की ही तरह प्रतिक्रियावादी है। इसलिए, लेनिन के अनुसार, पिछड़े और औपनिवेशिक देशों में कम्युनिस्टों को अपना अस्तित्व बचाए रखकर वहां के बुर्जुआ वर्ग से अस्थाई समझौता कर लेना चाहिए।

लेनिन के अनुसार इन समाजों के साम्राज्य विरोधी आंदोलनों में किसानों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

रॉय के तर्क इससे अलग थे। उन्होंने एक वैकल्पिक दस्तावेज पेश किया, जिसमें राष्ट्रीय आंदोलनों के साथ कम्युनिस्ट पार्टियों और कॉमिंटर्न द्वारा सहयोग के विचार का विरोध किया गया था। इस दस्तावेज के अनुसार औपनिवेशिक देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों को, राष्ट्रीय आंदोलनों से अलग रह कर मजदूरों और किसानों के संगठन विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। लेनिन की समझ के विपरीत, रॉय का तर्क था कि पिछड़े हुए औपनिवेशिक पूंजीवादी व्यवस्था ने कमजोर बुर्जुआ (पूंजीपति) वर्ग और सशक्त सर्वहारा वर्ग पैदा किए और सर्वहारा वर्ग क्रांति का नेतृत्व करने के लिए सक्षम था। रॉय ने साम्राज्य-विरोधी आंदोलन में सर्वहारा वर्ग की ताकत और भूमिका की अतिरंजित व्याख्या की। देशी बुर्जुआ वर्ग की भूमिका को नगण्य बताते हुए उन्होंने किसानों की भूमिका की अहमियत पर भी संदेह व्यक्त किया। दस्तावेज का निष्कर्ष यह था कि भारत का मजदूर वर्ग अपने बल-बूते पर साम्राज्य-विरोधी क्रांति का नेतृत्व करने में समर्थ था। सघन बहस के बाद रॉय के संशोधित दस्तावेज को कांग्रेस ने "पूरक दस्तावेज" के रूप में स्वीकार किया।

स्टालिन के नेतृत्व में कॉमिंटर्न के अनुशासन के तहत कॉमिंटर्न में रॉय का उत्साह घटने लगा। जैसे-जैसे विश्व क्रांति के आसार धूमिल पड़ने लगे, कॉमिंटर्न सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का प्रतिनिधि बनता गया। 1928 में कॉमिंटर्न की छठी कांग्रेस ने उन्हें निष्कासित कर दिया। इसी कांग्रेस में राष्ट्रीय आंदोलनों से सहयोग की नीति छोड़कर, सर्वहारा के नेतृत्व में टकराव की नीति तय की गई।

छठी कांग्रेस में उनके "अनौपनिवेशिकरण" (decolonization) के सिद्धांत को लेकर रॉय की आलोचना हुई। इस सिद्धांत के अनुसार औपनिवेशिक शासन औद्योगिकरण में बाधक नहीं था। इसके अनुसार यह साम्राज्यवाद के बदलते चरित्र का द्योतक था, इसमें मुनाफे का एक हिस्सा, देशी पूंजीपतियों को भी प्राप्त होता।

कॉमिंटर्न से निष्कासन के बाद रॉय भारत लौट आए और 21 जुलाई 1931 से 20 नवंबर 1936 तक जेल में बंद रहे।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दी गई जगह का प्रयोग करें।
ii) इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से अपने उत्तरों का मिलान करें।

1) उपनिवेशवाद के मुद्दे पर कॉमिंटर्न के साथ एम.एन. रॉय के मतभेदों पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

29.3 रॉय और भारतीय राजनीति

29.3.1 "संक्रमणकालीन भारत" के बारे में

1922 में एम.एन. रॉय ने "इंडिया इन ट्रांजिशन" शीर्षक से भारतीय समाज के बारे में एक पुस्तक लिखी। भारतीय समाज की उनकी समझ अन्य व्याख्याओं से बिल्कुल अलग थी। उदारवादियों, राष्ट्रवादियों और उग्र-राष्ट्रवादियों की व्याख्या से अलग रॉय ने भारतीय समाज की मार्क्सवादी व्याख्या की। इस प्रकार रॉय भारतीय राजनीति की वर्ग संरचना के संदर्भ में मार्क्सवादी व्याख्या करने वाले पहले चिंतक थे।

पहले की मान्यताओं में विदेशी पूंजीपति वर्ग को ही भारतीय जनता का शोषक चित्रित किया गया था, रॉय ने इस मान्यता का खंडन करते हुए देशी पूंजीपति वर्ग को भी जनता का शोषक बताया। विश्व युद्ध के बाद की स्थिति में जिससे राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग और साम्राज्यवाद के बीच समझौते की संभावनाओं पर जोर देते हुए जुझारु जन-आंदोलन का प्रस्ताव किया।

1922 में गया कांग्रेस से पहले रॉय ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लिए एक कार्यक्रम का मसौदा भेजा। इस मसौदे में प्रमुख रूप से निम्न मुद्दों पर चर्चा थी:

1) जमींदारी उन्मूलन
2) लगान घटाना
3) खेती के आधुनिकीकरण के लिए राजकीय सहायता
4) अप्रत्यक्ष करों का उन्मूलन
5) सार्वजनिक उपयोग के प्रतिष्ठानों का राष्ट्रीयकरण
6) आधुनिक उद्योगों का विकास
7) न्यूनतम मज़दूरी और दिन में 8 घंटे के काम से संबंधित कानून
8) अनिवार्य और निःशुल्क शिक्षा
9) राजनीति को धर्म से मुक्त रखना

29.3.2 संगठन के बारे में

राष्ट्रीय स्तर पर अपने अस्तित्व का अहसास, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी 1935 में ही करा पाई। इसके पहले इसकी ज्यादातर इकाइयां क्षेत्रीय दलों के रूप में थीं। "फ्यूचर ऑफ इंडियन पालिटिक्स" (भारतीय राजनीति का भविष्य) शीर्षक की पुस्तक में वर्ग संगठनों के अलावा एक जन संगठन की जरूरत पर जोर दिया गया। 1925 में बनी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, जन समर्थन जुटाने में असमर्थ थी। इसके अलावा, ज्यादातर समाजवादी और कम्युनिस्ट या तो बंदी जीवन की यातना झेल रहे थे या एक दूसरे से अलग-थलग दूर दराज के इलाकों में पड़े थे। भूमिगत भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी की इस जन संगठन के नीति निर्धारण में अहम भूमिका रहेगी। सार्वजनिक अभियानों में संलग्न यह जन संगठन कम्युनिस्ट पार्टी की दिशा-निर्देश पर काम करेगा। दोहरे संगठन की योजना इस उद्देश्य से की गई कि वैधानिक जन संगठन में सभी दलित वर्गों का संगठन होगा और कम्युनिस्ट पार्टी केवल मज़दूरों का। रॉय के अनुसार इस अनौपचारिक संगठन का कार्यक्रम कम्युनिस्ट पार्टी का न्यूनतम कार्यक्रम होगा। इसी योजना के तहत देश के विभिन्न हिस्सों में "मज़दूर किसान पार्टी" (वर्क्स एंड पेजेंट्स पार्टी) का गठन किया गया। कम्युनिस्ट पार्टी के हर सदस्य को मज़दूर किसान पार्टी (WPP) के सदस्य के रूप में उसके अनुशासन का पालन करना पड़ेगा। "डब्लू.पी.पी." से कम्युनिस्टों को ट्रेड यूनियन एवं अन्य सांस्कृतिक-राजनीतिक मोर्चों पर काम करने का अवसर मिला। संयुक्त मोर्चा के दौर में "डब्लू.पी.पी." और कम्युनिस्ट पार्टी के संबंध बने रहे।

कामिंटर्न की छठी कांग्रेस में संयुक्त मोर्चा की नीति में परिवर्तन आया और "आल इंडिया कान्फरेंस ऑफ वर्कर्स" को एक संदेश भेजकर, वर्गीय आधार पर सर्वहारा का स्वतंत्र संगठन बनाने को कहा गया।

29.3.3 रॉय और द्वितीय विश्व युद्ध

नवंबर 1936 में जेल से छूटने के बाद रॉय ने कांग्रेस के झंडे के नीचे एकजुटता से लामबंद होने का आह्वान किया। उनके समर्थक पहले से ही कांग्रेस में शामिल होने लगे थे। 1936 में उन्होंने कांग्रेस के फैजपुर अधिवेशन को संबोधित किया। किन्तु कांग्रेस को जनपक्षीय बनाने में वे असफल रहे।

1937 में उन्होंने "इंडिपेंडेंट इंडिया" नाम से एक साप्ताहिक पत्र शुरू किया। 1949 में इसका नाम बदलकर "रैडिकल ह्यूमनिस्ट" कर दिया। पहले अंक के संपादकीय में उन्होंने लिखा, "राजनैतिक स्वतंत्रता साध्य नहीं, बल्कि भारतीय समाज के क्रांतिकारी परिवर्तन के उद्देश्य का साधन मात्र है।"

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी के वैचारिक विकास और मज़दूर वर्ग की भूमिका की समझ की दिशा में काफी परिवर्तन देखने को मिले। हिटलर द्वारा सोवियत संघ पर आक्रमण के बाद युद्ध विरोधी संयुक्त मोर्चा की वकालत करने वाले कम्युनिस्टों ने युद्ध के लिए समर्थन जुटाना शुरू कर दिया। नारों के संदर्भ में "साम्राज्यवादी युद्ध" "जनयुद्ध" में बदल गया। 1942 के "भारत छोड़ो" आंदोलन के दौरान कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने सदस्यों को सरकार के साथ सहयोग का निर्देश दिया। एम.एन. रॉय भी कम्युनिस्ट पार्टी की ही तरह भिन्न-भिन्न देशों की सेनाओं के लिए समर्थन जुटाने की वकालत कर रहे थे। उसके

अनुसार, युद्ध दो राज्यों के बीच न होकर दो विचारधाराओं के बीच था। रॉय ने युद्ध के फासीवाद-विरोधी चरित्र पर जोर देते हुए इसे साम्राज्य-विरोधी आंदोलन से अलग करके देखने को कहा। रॉय ने युद्ध के दौरान अंग्रेजी शासन का विरोध करने के लिए कांग्रेस की कटु आलोचना की।

युद्ध के दौरान "जनयुद्ध" नीति लागू करने के लिए, अंग्रेजी शासन ने, सारे कम्युनिस्ट बंदियों को रिहा कर दिया। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को कानूनी घोषित कर दिया, जिससे इसकी सदस्य संख्या भी बढ़ी। कम्युनिस्ट पार्टी की इस नीति के चलते इसकी प्रतिष्ठा जन-मानस में गिर गई और इसके कार्यकर्त्ताओं पर लोगों की विश्वसनीयता घट गई। कम्युनिस्ट आंदोलन के लिए यह अपूरणीय क्षति थी।

29.3.4 विचार-प्रणाली की समस्याएं

साम्राज्य-विरोधी संघर्ष के दौरान एम.एन. रॉय और अन्य कम्युनिस्ट नेताओं ने क्रांति के एक नए स्वरूप का खाका बनाने के प्रयास किए। रॉय का प्रयास मार्क्सवाद के केंद्रीय मूल्यों के आधार पर भावी क्रांति की रूपरेखा तैयार करने का था। भारतीय समाज का विश्लेषण, उन्होंने मार्क्सवादी ढांचे में मौजूद श्रेणियों के ही आधार पर किया। लेकिन भारत एक अलग ही ऐतिहासिक दौर से गुजर रहा था। इतिहास की गति समझ पाने में असमर्थता की वजह से, औपनिवेशिक संदर्भ में मज़दूर वर्ग के संरचनात्मक परिवर्तन की प्रक्रिया को नहीं समझ सके। रॉय का भारतीय समाज का विश्लेषण विकसित पूंजीवादी देशों के विश्लेषण में प्रयुक्त अवधारणाओं पर आधारित था। उन्होंने भारतीय मज़दूर वर्ग की कई विशिष्टताओं की अनदेखी कर दी।

मार्क्सवाद, पूंजीवादी समाजों में मज़दूरों में वर्ग चेतना पैदा करने पर जोर देता है। किंतु भारतीय मज़दूर वर्ग एक समरूप वर्ग नहीं था। समुदाय, जाति, धर्म आदि के प्रति उसकी पारंपरिक वफादारी बरकरार रही। औपनिवेशिक श्रम-बाज़ार के संदर्भ में देखा जाए तो बहुत से मज़दूरों की हालत विस्थापित मज़दूरों की थी जबकि प्लांटेशन या खदानों के मज़दूर अस्थाई थे और उन्हें साल में कुछ ही महीने काम मिलता था। इन मज़दूरों को "अर्ध-सर्वहारा" और "अर्ध-किसान" कहा जा सकता था क्योंकि जमीन से उनका संबंध बना हुआ था। इसके अलावा, इस शताब्दी के शुरू में औद्योगिक सर्वहारा की संख्या नगण्य थी। बंबई, कलकत्ता, लखनऊ, कानपुर और जमशेदपुर जैसे औद्योगिक नगरों में ही इनकी संख्या अधिक थी। यहां के मज़दूर वर्ग की विशिष्टताओं को स्थापित मार्क्सवादी मूल्यों के ही आधार पर समझना मुश्किल था विश्लेषण की इस गलती के चलते, रॉय, समाजवाद और राष्ट्रवाद की मांगों को मिलाकर क्रांति का कोई खाका बनाने में असफल रहे।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी : i) अपने उत्तर के लिए नीचे दी गई जगह का प्रयोग करें।
ii) इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से अपने उत्तरों का मिलान करें।

1) भारतीय समाज की रॉय की व्याख्या किन अर्थों में भिन्न थी?

.....

.....

.....

.....

2) "फ्यूचर ऑफ इंडियन पालिटिक्स" में रॉय के विचारों पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

.....

.....

.....

.....

29.4 क्रांतिकारी मानवतावाद

29.4.1 मार्क्सवाद की समीक्षा

रैडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी के विसर्जन के बाद उन्होंने अपने विचारों का पुनर्मूल्यांकन किया। इस पुनर्मूल्यांकन के बाद कई आधारों पर उन्होंने मार्क्सवाद की आलोचना करनी शुरू कर दी।

युद्ध के दौरान और उसके बाद रॉय मानने लगे कि सोवियत संघ में समाजवाद, राष्ट्रवाद में बदल चुका था और स्टालिन के नेतृत्व में कम्युनिस्ट पार्टी निरंकुश हो गई थी। असहमति और विरोध के सभी तरीकों का दमन होने लगा था। रॉय के अनुसार, पूर्वी यूरोपीय देशों में कम्युनिस्ट तानाशाही स्थापित करने जैसे सोवियत नेताओं के कारनामें उनकी महाशक्ति बनने के मंसूबों के संकेत थे।

एम.एन. रॉय ने मार्क्स के इतिहास की आर्थिक व्याख्या की भी आलोचना की। उनकी रॉय में, व्यक्ति को समूह का हिस्सा मात्र मानकर, मार्क्सवाद व्यक्ति की स्वायत्ता का निषेध करता है। रॉय के अनुसार सामाजिक संगठनों की मौजूदगी से यह साबित होता है कि व्यक्ति का अस्तित्व समूह से पहले का है।

उनके तर्क के अनुसार एक सभ्य समाज का आदर्श साम्यवाद या समाजवाद की बजाय आजादी का होना चाहिए। इस संदर्भ में "क्रांतिकारी मानवतावाद" की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा, "व्यक्ति का वजूद हमारी योजना के केंद्र में है, जबकि दूसरे सामूहिकता के नाम पर उसके स्वतंत्र अस्तित्व को कुर्बान कर देते हैं।"

नए संदर्भ में क्रांति का मार्क्सवादी स्वरूप पुराना पड़ चुका था। आधुनिक राज्यों की सैन्य क्षमता को देखते हुए उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि सशस्त्र क्रांति की संभावनाएं खत्म हो चुकी थीं। उन्होंने इसके स्थान पर, सार्वभौमिक आग्रह से सहमति द्वारा क्रांति का विचार प्रस्तुत किया।

रॉय के जीवन के अंतिम दिन (1947-54) उनके क्रांतिकारी मानवतावाद के दिन थे। टुरगाट और कन्डारसेट जैसे पाश्चात्य दार्शनिकों की तरह रॉय भी सोचते थे कि विज्ञान की प्रगति ने मानव की रचनात्मक क्षमताओं को मुक्त कर दिया है। उनकी राय में भारत की समस्याओं की समझ विकसित करने में मौजूद दार्शनिक धारणाएं सफल नहीं हो सकीं इसलिए एक नए दर्शन की जरूरत थी। उनके अनुसार उनका क्रांतिकारी मानवतावाद का दर्शन "व्यक्ति और नैतिक मूल्यों को अहमियत देता है" और किसी भी समाज व्यवस्था को प्राप्त "व्यक्तिगत आजादी के आधार" पर करता है।

राजनीति, उनके अनुसार, अवसरवादिता के चलते दूषित हो चुकी थी और नैतिक मूल्यों के समावेश से ही इसका शुद्धीकरण संभव था। उनका मानना था कि राजनीति में हिस्सेदारी का अधिकार महज वोट देने का अधिकार था। पूर्ण जनतंत्र की स्थापना के लिए उन्होंने राजनीति के पुनर्मूल्यांकन पर जोर दिया।

29.4.2 राजनीति का मानवतावादी प्रारूप

राजनीति के नए प्रारूप का रॉय का सिद्धांत अध्यात्मवाद, राष्ट्रवाद, साम्यवाद की विचारधाराओं का निषेध करता है और भौतिकवाद की हिमायत। इसके अनुसार भौतिकवाद ही संभव दर्शन है क्योंकि यह प्रकृति के वास्तविक अस्तित्व की जानकारी देता है।

नैतिकता और आजादी, इस नए मानवतावाद के प्रमुख तत्व हैं। रॉय के अनुसार मनुष्य अपने वातावरण का अधीनस्थ है किंतु उसका विवेक उसे प्राकृतिक घटनाओं को बेहतर एवं तार्किक व्याख्या करने को बाध्य करता है। विवेकशील प्राणी के रूप में मनुष्य भौतिक अस्तित्व के लिए संघर्ष करता है। यह संघर्ष एक स्तर पर भौतिक जरूरतों को पूरा करने का संघर्ष दूसरे स्तर पर यह स्वतंत्रता का संघर्ष है। रॉय के अनुसार, स्वतंत्रता एक पूर्ण विचार न होकर एक प्रक्रिया है। स्वतंत्रता के संघर्ष में विवेकशील होने के कारण, मनुष्य प्रकृति पर नियंत्रण करना चाहता है। स्वतंत्रता का मतलब "व्यक्ति की सभी मानवीय क्षमताओं पर से किसी भी तरह के नियंत्रण की समाप्ति" है। मनुष्य की स्वतंत्रता उनके चिंतन का केंद्र बिंदु है, व्यक्ति को इससे वंचित करने वाली सभी विचारधाराओं की उन्होंने आलोचना की। वे व्यक्ति की संप्रभुता पर आधारित नए समाज की रचना करना चाहते थे।

29.4.3 दलविहीन जनतंत्र

दलीय राजनीति के अनुभवों के आधार पर रॉय ने सत्ता-केंद्रित राजनीति की आलोचना करते हुए कहा "राजनीति का अस्तित्व संगठित सामाजिक जीवन के अस्तित्व जितना ही पुराना है... इसलिए राजनीति और राजनैतिक दलों का संबंध स्वयं सिद्धि नहीं है।" उन्होंने राजनैतिक दलों के अस्तित्व के बिना ही राजनैतिक गतिविधियों की संभावनाओं पर विचार किया।

रॉय के अनुसार दलीय व्यवस्था लोगों के प्रतिनिधित्व का उपयुक्त माध्यम नहीं है। इसमें व्यक्तियों के किसी भी प्रभावी राजनैतिक हिस्सेदारी की संभावना नहीं रहती। इसके अलावा, दलीय शासन का मतलब लोगों के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले एक अल्पसंख्यक समूह का शासन है। वोट देने का अधिकार एक औपचारिकता मात्र बन कर रह गया है। निर्वाचित सरकार सिर्फ सत्ताधारी दल का प्रतिनिधित्व करती है। और बड़ी से बड़ी पार्टी के सदस्यों की संख्या, जनसंख्या का एक बहुत छोटा अंश ही होती है। रॉय के विचार से, दलीय व्यवस्था, चूंकि लोगों के बजाय नेताओं के हितों की रक्षा करती है जिससे बेईमानी और भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।

संसदीय जनतंत्र की कमियों को दूर करने के लिए, उन्होंने नागरिकों की भागीदारी से संगठित जनतंत्र का विचार पेश किया। जनतंत्र के इस प्रारूप को सफल बनाने के लिए नई आर्थिक व्यवस्था की जरूरत पर भी जोर दिया। रॉय के अनुसार, राज्य के कार्य चैतन्य लोगों के स्वतंत्र और स्वैच्छिक संगठन करेंगे, यह समस्या का आंशिक समाधान है। परामर्शदाता की हैसियत से राज्य लोगों द्वारा बनाई गई नीतियों की देख-रेख करने के साथ प्रशासनिक जिम्मेदारियां निभाएगा। स्थानीय समितियों में हिस्सेदारी से लोगों में अपने संप्रभु अधिकारों के प्रति जागरुकता पैदा होगी।

इस नई सामाजिक व्यवस्था की आर्थिक गतिविधियों की तीन प्रमुख विशिष्टताएँ हैं:

क) सहकारी अर्थव्यवस्था

ख) केंद्रीय योजना

ग) विज्ञान और टेक्नोलाजी (अभियांत्रिकी)

रॉय पूंजीवाद और राज्य-नियंत्रित समाजवाद दोनों के विरुद्ध थे, उन्होंने व्यापक सहयोग और विकेंद्रीकरण के सिद्धांतों पर आधारित एक नई अर्थव्यवस्था का प्रारूप तैयार किया। गांव, जिला, क्षेत्र और राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक गतिविधियों के संचालन की जिम्मेदारी बहुउद्देशीय सहकारी समितियों की होगी। इसी प्रकार योजना की शुरुआत जन साधारण के स्तर से होनी चाहिए। विज्ञान और टेक्नोलाजी का इस्तेमाल आर्थिक विकास और स्वतंत्रता की चाहत के बीच ताल-मेल बैठाने का होना चाहिए।

इस तरह, मार्क्सवाद से क्रांतिकारी मानवतावाद तक की रॉय की वैचारिक यात्रा "सर्वहारा की तानाशाही" से "दलविहीन जनतंत्र" तक की राजनैतिक व्यवस्था की यात्रा है। इस पूरी वैचारिक यात्रा में यह मान्यता है कि क्रांति का सूत्रपात सदा क्रांतिकारी विचारों द्वारा ही होता है और राजनैतिक क्रांति के लिए दार्शनिक क्रांति आवश्यक है। "रैडिकल डेमोक्रेसी" के सिद्धांतों के अनुसार समाज का पुनर्गठन इस तरह किया जाना चाहिए जो व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं की सुरक्षा करते हुए जन-साधारण के विकास और समृद्धि का पथ प्रशस्त करे। इस प्रकार, क्रांति का सत्ता-संघर्ष या हिंसा से कोई संबंध नहीं है, क्रांति का उद्देश्य व्यक्तियों के दृष्टिकोण बदलना और दार्शनिक पुनर्निर्माण होना चाहिए।

29.5 मूल्यांकन

एम.एन. रॉय पहले राजनैतिक चिंतक थे, जिन्होंने समकालीन बौद्धिक परंपराओं को निरस्त करके औपनिवेशिक शासन की नई व्याख्या की। उन्होंने मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य से भारतीय समाज की व्याख्या का प्रयास किया। इसके बावजूद, उन्हें भारतीय इतिहास का त्रासद व्यक्तित्व कहा जाता है। उनका राजनैतिक जीवन असफलताओं से भरा था। यदि हम रॉय का मूल्यांकन उनके लेखन ही के आधार पर करें तब भी बहुत गड़बड़ियां नजर आती हैं।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि चिंतन की दिक्कतें रॉय की विचार प्रणाली में ही थी। उन्होंने क्रांतिकारी मानवतावादी चरण में अपनी पुरानी मार्क्सवादी आस्थाओं का पूरी तरह निषेध किया। साथ ही, उन्होंने संसद, चुनाव, दलीय व्यवस्था जैसे उदारवादी विचारों की भी आलोचना की। यह नया दर्शन एक ऐसी व्यवस्था की कल्पना करता है जिसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शिक्षा और सहयोग की भावना के जरिए व्यक्तियों में परस्पर सामंजस्य पैदा किया जा सकता है।

रॉय ने भारत की सामाजिक समस्याओं का अध्ययन तो किया किंतु उनके समाधान का कोई दर्शन न दे सके। समाज का जो खाका उन्होंने बनाया उसमें तार्किक निरंतरता का अभाव था। यही कारण है कि उन्हें नेहरू और गांधी के श्रेणी का चिंतक नहीं माना जा सकता।

29.6 सारांश

इस इकाई में आपने भारतीय समाज की मार्क्सवादी (वर्ग) विश्लेषण की शुरुआत करने वाले चिंतक एम.एन. रॉय के विचारों के बारे में पढ़ा। आपने रॉय के मार्क्सवाद से मोहभंग के बारे में भी पढ़ा। मोहभंग के बाद रॉय ने क्रांतिकारी मानवतावाद का दर्शन दिया। अंत में आपने रॉय के विचारों की कमियों और खूबियों के बारे में भी पढ़ा। इससे आपको एम.एन. रॉय के मौलिक और रुमानी विचारों को समझने में मदद मिली होगी।

29.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

समरेन रॉय, *एम.एन. रॉय द टवाइस बार्न हेरेटिक*

वी.बी. कार्निक, *बायोग्राफी ऑफ एम.एन. रॉय*

जे.सी. जौहरी, *द ग्रेट रैडिकल ह्यूमनिस्ट*

जे.बी.एच. वाडिया, *एम.एन. रॉय*

थामस पेंथम (सं), *इंडियन पालिटिकल थाट*

29.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

देखें 29.2

बोध प्रश्न 2

देखें 29.3.1 और 29.3.2